# एरिका की कहानी

लेखिका: रुथ वंडर ज़ी
चित्रकार: रोबेर्तो इन्नोसन्ति
हिंदी अनुवाद: अरविन्द गुप्ता

## लेखिका के दो-शब्द

1995 में, दूसरे महायुद्ध की पचासवीं सालगिरह पर मेरी इस कहानी की नायिका से मुलाकात हुई. मैं अपने पति के साथ जर्मनी के शहर रोथइन्बुर्ग में सड़क के किनारे बैठी थी. पिछली रात के बवंडर ने इस मध्यकालीन गाँव में काफी तबाही मचाई थी. सिटी-हॉल की छत उड़ गयी थी और कबेलुओं के टुकड़े और मलबा सड़क पर चारों ओर फैला पड़ा था. मैं कर्मचारियों को सफाई करते हुए देख रही थी. एक उम्र दराज़ व्यापारी ने मुझे बताया कि रात के तूफ़ान ने उतनी ही तबाही मचाई, जितनी इंग्लैंड और मित्र देशों की सेनायों ने दूसरे महायुद्ध में मचाई थी.

कुछ देर बाद दूकानदार वापिस चला गया. उसके बाद पास बैठी महिला ने, हमें अपना परिचय दिया. उसका नाम एरिका था. “क्या हम लोग यात्रा कर के आये थे?” उसने हमसे पूछा. जब हमने उसे बताया कि हम दो हफ़्तों की शैक्षणिक यात्रा पर येरुशलम गये थे तब उसकी आँखों में अचानक एक चमक आई. उसने बताया कि वो लम्बे अर्से से येरुशलम जाना चाहती थी पर अभी तक वो उसके लिए पैसे नहीं जुटा पाई थी.

उसके गले में सोने की एक चेन थी जिसमे “डेविड का सितारा” लटका था. यानि वो यहूदी थी. मैंने उससे कहा कि इजराइल के प्रवास के बाद हम लोगों ने ऑस्ट्रिया स्थित यहूदी कंसंट्रेशन कैम्प का भी दौरा किया था. तब एरिका ने हमें बताया कि एक बार वो दचाऊ के यहूदी शिविर तक गयी थी, परन्तु वहां पहुंचकर अन्दर जाने की उसकी हिम्मत नहीं हुई.

उसके बाद एरिका ने मुझे अपनी कहानी सुनाई ....

1933 से 1945 तक मेरी कौम के 60-लाख यहूदियों का कत्लेआम हुआ. बहुतों को भूख से मारा गया.

तमाम लोगों को गैस की भट्टियों में जलाकर मारा गया. मैं कैसे तो बच गयी.

***

मेरा जन्म 1944 में किसी समय हुआ होगा.
मुझे अपना जन्मदिन नहीं पता.
मुझे जन्म के समय दिया अपना नाम तक नहीं पता.
मैं किस देश के किस शहर में पैदा हुई, यह भी मुझे नहीं पता.
मेरे भाई-बहन हैं या नहीं, यह भी मुझे नहीं मालूम.
मुझे बस इतना पता है कि मैं उस समय कुछ महीने की थी, और मैं “होलोकॉस्ट” की विभीषिका से बच गयी.
मैं अक्सर अपने परिवार के बारे में सोचती हूँ, जिनके साथ मैंने कुछ अंतिम हफ्ते बिताये. शायद मेरे माता-पिता की सारा सामान चोरी हो गया था. फिर उन्हें ज़बरदस्ती घर छोड़ने पर मजबूर किया गया और एक गरीब यहूदी बस्ती (घेटो) में रहने को मजबूर किया गया.

बाद में घेटो छोड़ने के आदेश मिले. मेरे माता-पिता कंटीले तार वाले घेटो के इलाके को छोड़कर खुश हुए. उन्हें लगा कि अब उन्हें टाइफाइड की बीमारी, भीड़-भाड़, गंदगी और भूख से मुक्ति मिलेगी. यहाँ से उन्हें कहाँ ले जाया जायेगा, क्या उसका उन्हें कोई अंदाज़ था? क्या उन्हें किसी बेहतर रिहायशी इलाके में ले जाया जायेगा? क्या उन्हें वहां अच्छा खाना और नौकरी मिलेगी? उन्होंने घेटो के लोगों से, "मृत्यु-कैम्प" में ले जाये जाने की अफवाहें ज़रूर सुनी थीं.

जब उन्हें सैकड़ों अन्य यहूदियों के साथ रेलवे स्टेशन पर ले जाया गया, तो उन्हें कैसा लगा होगा? उन्हें स्टेशन पर मालगाड़ियों में ठूंस-ठूंस कर भरा गया. वहां सिर्फ उनके खड़े होने भर की जगह थी. जब मालगाड़ी का दरवाज़ा बंद किया गया होगा, तो क्या उनका दिल नहीं दहला होगा?

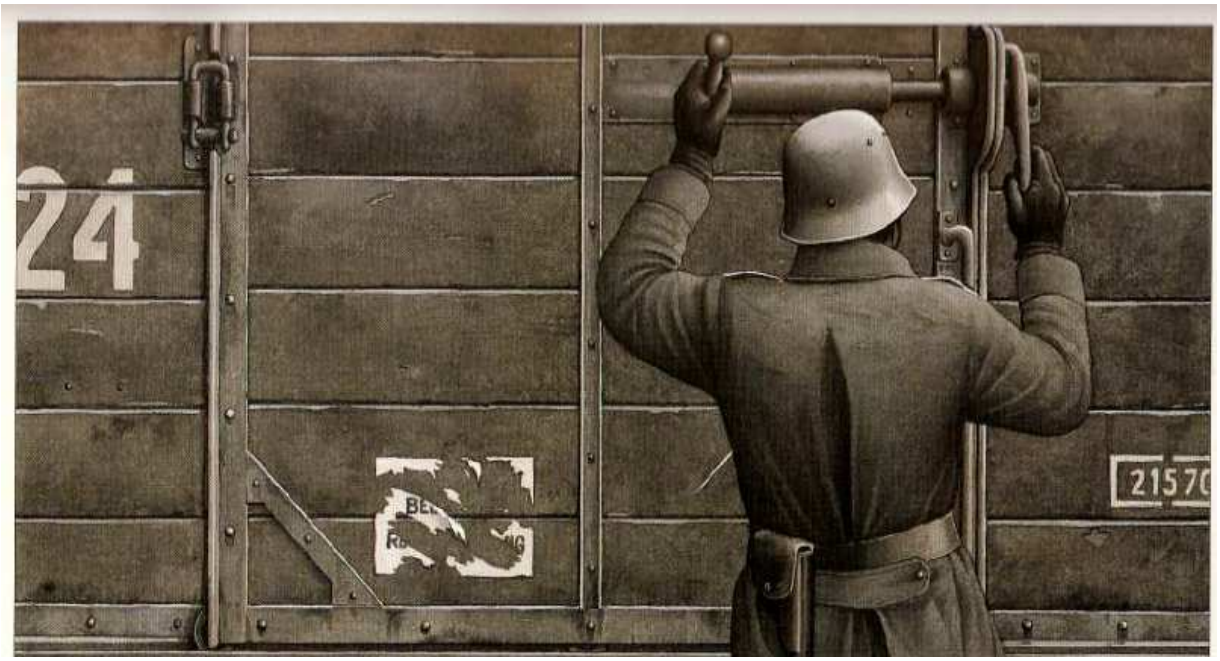


ट्रेन किसानों के खेतों को पार कर तमाम गाँवों से होकर गुजरी होगी जो इस आतंक से बिलकुल बेखबर होंगे. उन्होंने उस ट्रेन में कितने दिन सफ़र किया? कितने घंटे मेरे माता-पिता एक दूसरे से सटकर खड़े रहे?

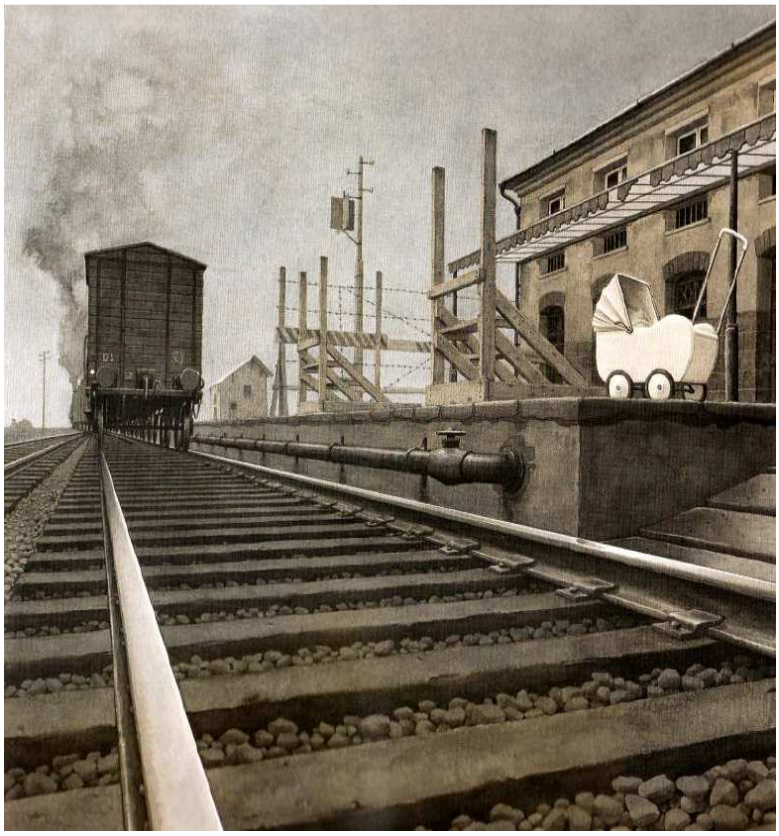

माँ ने बदबू, लोगों के रोने-धोने, और डर से बचाने के लिए मुझे अपने कलेजे से चिपकाकर रखा होगा. अब तक उन्हें साफ़ हो गया था कि वो किसी सुरक्षित स्थान पर नहीं जा रही थीं. वो ट्रेन में कहाँ खड़ी थीं? क्या पिता उनके पास खड़े थे? क्या पिता ने माँ की हिम्मत बढाई थी? वो आगे क्या करें, क्या इस बारे में उन्होंने आपस में कुछ चर्चा की?

उन्होंने अपना अहम् और अंतिम निर्णय कब लिया?

माँ ने लोगों से कहा, “माफ़ करें, ज़रा मुझे रास्ता दें?” उसके बाद वो भीड़ में से निकलकर मालगाड़ी की दीवार के पास गयी होंगी.

मुझे कम्बल में लपेटते वक्त क्या उन्होंने मेरा नाम गुनगुनाया होगा? क्या उन्होंने अपने प्यार का इज़हार करते हुए मेरे गाल और माथे को चूमा होगा? क्या वो रोयीं होंगी? क्या उन्होंने प्रार्थना की होगी?

जब ट्रेन एक गाँव से गुज़रते समय धीमी हुई तब माँ ने मालगाड़ी की दीवार में ऊपर वाले झरोखे में से झाँका. पिता की मदद से उन्होंने झरोखे के बाहर लगे कंटीले तारों को, फैलाकर एक-दूसरे से दूर किया. फिर माँ ने मुझे अपने सर के ऊपर हलकी रोशनी की तरफ उठाया. उसके बाद क्या हुआ बस वही मुझे निश्चित तौर पर पता है.

माँ ने मुझे ट्रेन से बाहर फ़ेंक दिया.

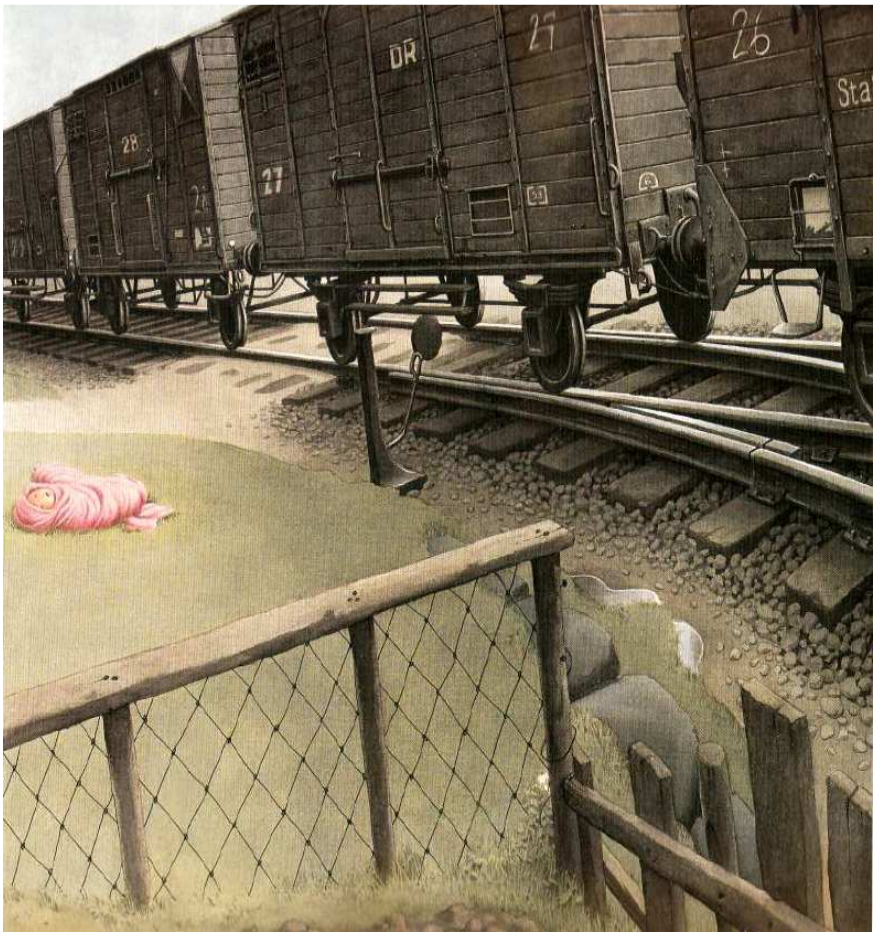


उन्होंने मुझे झरोखें में से रेलवे क्रासिंग के पास स्थित, एक घास के टुकड़े पर फेंका. जो लोग रेलवे क्रासिंग के पास खड़े होकर ट्रेन के गुजरने का इंतजार कर रहे थे, उन्होंने मुझे मालगाड़ी से बाहर गिरते हुए देखा. मेरी माँ खुद मौत के मुंह में जा रही थीं, पर मुझे उन्होंने एक नयी जिंदगी बक्शी.

***

रेलवे क्रासिंग के पास खड़े एक इंसान ने मुझे उठाया. उसने मुझे एक महिला के हवाले किया, जिसने मेरी अच्छी परवरिश की. मेरी खातिर उसने खुद अपनी ज़िन्दगी को जोखिम में डाला. उसने मेरी उम्र का अंदाज़ लगाया और मुझे एक जन्म-तारीख़ दे डाली. उसे ने मुझे नाम दिया - एरिका. उसने मुझे घर दिया, मेरी देखभाल की, खाना खिलाया और स्कूल भेजा. उसने मेरे साथ बहुत अच्छा सलूक किया.

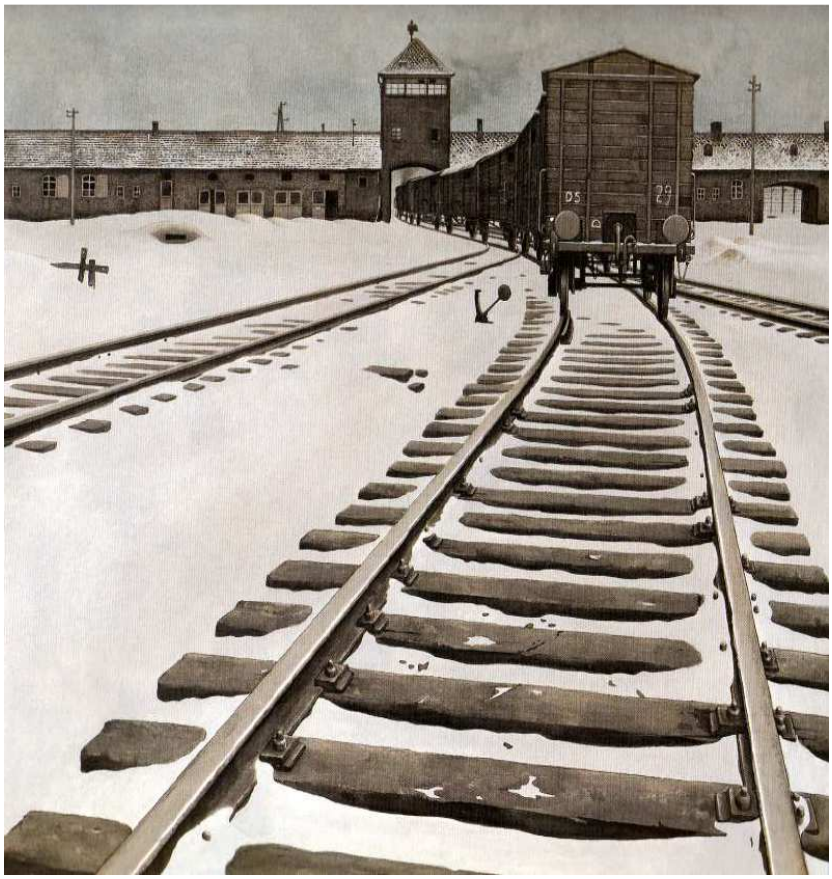

बीस साल की उम्र में मैंने एक नेक इंसान के साथ शादी की. उसने मेरे दुःख-दर्द को पहचाना और एक परिवार का हिस्सा होने की मेरी ललक को समझा. मेरे तीन बच्चे हैं. अब उनके खुद के बच्चे हैं. उनके चेहरों में मुझे अपना चेहरा दिखाई देता है.

ऐसा कहा जाता था कि एक दिन दुनिया में यहूदियों की आबादी, रात में तारों की संख्या के बराबर होगी. 1933 से 1945 के बीच उनमें से 60-लाख तारे टूट कर गिर गए. उनमें से हर तारा यहूदी लोगों का था, जो बेमौत मरे और पूरे-के-पूरे परिवार तबाह हुए.

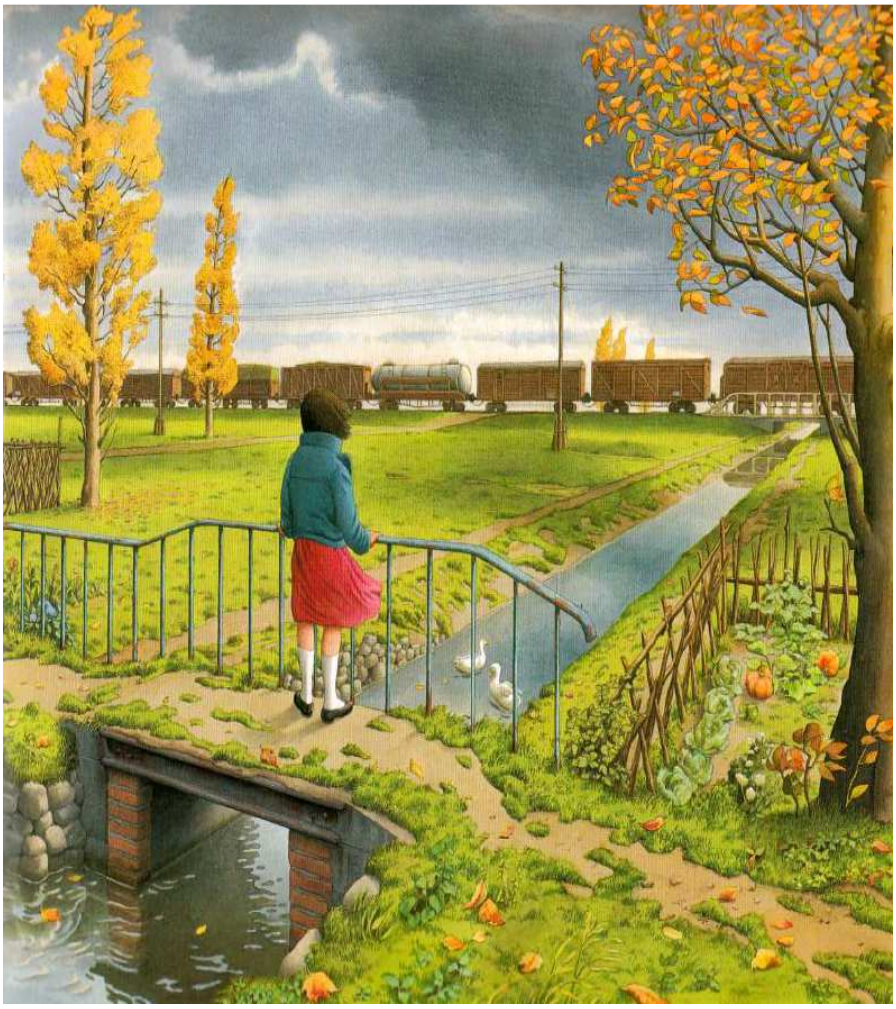

पर आज मेरा पेड़ दुबारा से अपनी जड़ें जमा रहा है.